Part-I

Thinking

Dr. Usha Choudhary

Q. critically examine the "peripheral theory" of thinking. चिंतन की परिधीय सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या करें।

Ans- चिंतन (thinking) प्राणी की एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया मनुष्य में सबसे विकसित रूप में पायी जाती है। इसी प्रक्रिया के कारण मनुष्य समाज का सबसे विकसित प्राणी माना जाता है। परंतु चिंतन के स्वरूप को स्पष्ट करना किसी भी प्राणी के लिए एक कठिन कार्य होता है। सामान्य रूप से चिंतन का तात्पर्य कुछ सोचना विचार करना इत्यादि होता है, लेकिन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से चिंतन एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी भी समस्या का समाधान होता है। बहुत से विद्वान तो इसे समस्या समाधान की प्रक्रिया मानते हैं और कहते है कि चिंतन का सीधा संबंध किसी न किसी समस्या से रहता है। यह प्रक्रिया तभी प्रारंभ होती है जब कोई समस्या उपस्थित होती है और उसका समाधान भी तब होता है जब उस समस्या का समाधान हो जाता है। अर्थात् चिंतन का स्वरूप किसी समस्या का समाधान करना है।

According to Warren - "Thinking is an identional activity symbolic character ineciated by a problem the individual is facing.

अर्थात् चिंतन व्यक्ति के सम्मुख उपस्थित समस्या से उत्पन्न होनेवाली विचारात्मक स्वरूप की प्रतीकात्मक क्रिया है जिससे समस्या का समाधान होता है, लेकिन समस्या का यह समाधान कैसे होता है, इस संबंध में विद्वानों के बीच कुछ विवाद है।

चिंतन प्रक्रिया का प्रारंभ कहा से -

होता है ? इसका मुख्य कार्य स्थल कहाँ होता है समस्या के उत्पन्न होने और उसके समाधान करने की क्रिया कहाँ होती है ? इस संबंध में दो प्रकार के विचार व्यक्त किये गए हैं।

चिंतन प्रक्रिया के कार्यस्थल के संबंध में जो दो प्रमुख विचारधारा प्रचलित हैं वे निम्नलिखित हैं -

(1) central view (केन्द्रीय विचारधारा)
(2) Peripheral view (परीधीय विचारधारा)

Peripheral view.

चिंतन का परीधीय सिद्धांत मुख्य रूप से भौतिकवादी दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें William James के आदत संबंधी विचारों का बहुत महत्व दिया गया है। लेकिन इस सिद्धांत को व्यवस्थित रूप देने का श्रेय Watson नामक व्यवहारवादी को जाता है। 1924 ई० में इस विद्वान ने परीधीय सिद्धांत की व्यवहारवादी व्याख्या प्रस्तुत की। इनके अनुसार किसी भी प्रकार के चिंतन में प्राणी की शारीरिक क्रियाओं का सबसे अधिक महत्व होता है। व्यवहारवादियों के अनुसार चिंतन में मानसिक क्रियाओं की अपेक्षा शारीरिक क्रियाएँ अधिक स्पष्ट होती हैं। Watson ने यह दावा किया है कि प्राणी का चिंतन एक प्रकार का आंतरिक भाषण है। यह सिद्धांत प्राणी के स्वर यंत्रों पर अधिक बल देता है और इसे शारीरिक क्रिया का ही एक प्रमुख अंग मानता है।

परीधिय सिद्धांत के अनुसार जब भी कोई उत्तेजना हमारी किसी ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करती है तो एक प्रकार का स्नायु-प्रवाह (nerve impulse) उत्पन्न होता है, जो विभिन्न स्नायुओं के द्वारा cortex में पहुँचता है।

उसके पहुँचने पर cortex उत्तेजित हो जाती है जिसके फलस्वरूप वहाँ से भी एक प्रकार का स्नायु प्रवाह निकलता है, जो शरीर के विभिन्न अंगों में अर्थात कर्मेन्द्रिय में पहुँचता है जिसके फलस्वरूप किसी भी प्रकार की शारीरिक या पेशीय क्रियाएँ होती हैं। किसी भी प्रकार के समस्या के समाधान में ज्ञानेन्द्रियों से लेकर कर्मेन्द्रिय तक की यह लंबी प्रक्रिया होती रहती है, वाटसन की इस लंबी प्रक्रिया को पेशीय क्रिया मानते हुए पेशीय सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ है।

Watson नामक विद्वान ने अपने इस सिद्धांत के पक्ष में अनेक प्रमाण दिए हैं जैसे

(1) Watson के अनुसार प्राणी की आंतरिक क्रियाएँ एक शृंखला के रूप में होती है जिसमें उसकी अधोस्वर वाणी की क्रिया सन्निहित रहती है और इसी क्रिया को हम चिंतन कहते हैं।

(2) कोई भी प्राणी अपने वातावरण से अनुकूलन स्थापित करके ही किसी ज्ञान या वस्तु को अर्जित करता है, वह अपने वातावरण में अपनी भाषा आदतों को अर्जित करता है। इसी तरह किसी भी वस्तु या परिस्थिति के लिए उसकी यह आदत शब्द उत्तेजना बन जाती है, उसका चिंतन भी इसी उत्तेजना का परिणाम होता है।

(3) प्राणी का स्मरण वस्तुतः उसके शाब्दिक आदतों की धारणा मात्र है, अर्थात हमारी स्मृति संबंधी और गति संबंधों का संरक्षण है। जिससे शब्दों के बोलने में मदद मिली है, हमारा चिंतन का आधार भी यह शाब्दिक आदत ही होते हैं।

(4) चिंतन वास्तव में एक प्रयत्न और भूल की प्रक्रिया है, कोई भी व्यक्ति किसी प्रश्न का उत्तर ढूंढते समय कुछ न कुछ बोलता रहता है उसी प्रकार समस्या का समाधान करते समय व्यक्ति मन ही मन कुछ बोलता रहता है।

(5) जब कभी हमारी मौलिक उत्तेजक परिस्थितियों की संतुष्टि हो जाती है तो चिंतन का एक दौर समाप्त हो जाता है,

इस प्रकार की विभिन्न प्रमाणों के द्वारा Watson ने चिंतन की परीधिय सिद्धांत की सत्यता को प्रमाणित करने का प्रयास किया

Thorson, max आदि विद्वानो ने भी अपने अध्ययनो द्वारा पेशीय सिद्धांत की धारणा को सही प्रमाणित करने का प्रयास किया और कहा कि हमारी चिंतन मूल रूप से पेशीय क्रियाओं का ही परिणाम है। ये पेशीय क्रियाएं बोलने वाली व्यक्तियों की स्वर इन्द्रियों में तथा गूंगे और बहरे व्यक्तियों की अंगुलियों में होती है, जिस अंग की क्रिया को सोचा जाता है उस अंग में अप्रकट पेशीय क्रियाएँ होती है, अर्थात् चिंतन में पेशीय क्रियाओं का महत्वपूर्ण स्थान रहता है।

इस प्रकार पेशीय सिद्धांत के पक्ष मे अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार के अध्ययन किये हैं और इस सिद्धांत के विचारों को सही प्रमाणित किया है, लेकिन कुछ विद्वानों ने इस सिद्धांत की आलोचना की है और इसकी सत्यता पर संदेह व्यक्त किया है, जैसे -

आलोचना

(1) Shokiob नामक विद्वान ने विभिन्न आयु के व्यक्तियों पर इस संबंध मे एक महत्वपूर्ण अध्ययन किया, उन्होंने देखा कि जीवन के प्रारंभिक वर्षों में चिंतन में पेशीय क्रियाएँ अवश्य दिखायी देती है लेकिन आयु बढ़ने के साथ-साथ ये क्रियाएं - क्रमशः कम होती जाती है,

Smith नामक मनोवैज्ञानिक ने भी अपने इस प्रयोग में देखा कि queuer method द्वारा सभी वैसीय क्रियाओं को रोक देने पर भी चिंतन की क्रिया सतत जारी रहती है। इससे भी यह प्रमाणित होती है कि परीक्षित सिद्धांत की बातें सही नहीं हैं।

(3) Vingaka नामक विद्वान ने भी इस सिद्धांत संबंध में अपने अध्ययन के द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि इस सिद्धांत का यह कहना गलत है कि सभी प्रकार की अव्यक्त प्रतिक्रिया चिंतन होती है, वास्तव में किसी भी अव्यक्त क्रिया को चिंतन के समान मानना गलत है।

इस तरह चिंतन के इस सिद्धांत के विरोध में भी अनेक प्रमाण मिलते हैं, लेकिन इन आलोचनाओं के बावजूद इस सिद्धांत में भी व्यापक प्रमाण मिलते हैं। इसीलिए केन्द्रीय सिद्धांत की अपेक्षा परीक्षित सिद्धांत को निश्चित रूप से एक महत्वपूर्ण सिद्धांत माना जा सकता है।

इस सिद्धांत का पक्ष अधिक भारी होने पर भी हम निश्चित रूप से यह नहीं कह सकते हैं कि यह सिद्धांत बिल्कुल सही है, और केंद्रीय सिद्धांत बिल्कुल गलत है। निष्कर्ष के रूप में केवल हम यही कह सकते हैं कि चिंतन का कार्य स्थल समय, परिस्थिति समस्या तथा व्यक्ति की शारीरिक क्षमता के आधार पर बदलती रहती है।

Osgood महोदय ने इस सिद्धांत के संबंध में अपेक्षाकृत अधिक सही बातें कही हैं।

विकास के क्रम में जीव के प्रारंभिक वर्षों में चिंतन का आधार वैसीय क्रियाएँ होती हैं तो आयु वृद्धि के साथ-साथ केन्द्रिय क्रियाओं में परिवर्तित होती जाती है। इन्होंने अपने पुस्तक में लिखा है कि -

प्रतिकात्मक प्रक्रियाओं के विकास में परिधीय मध्यस्थता की आवश्यकता हो सकती है तो प्रौढ़ व्यक्तियों में प्रधानतः केन्द्रीय मध्यस्थता का रूप ले लेता है।